..... स्वच्छंद काव्य धारा और घनानंद

हिंदी साहित्य के मध्यकाल में मूलतः तीन प्रकार की काव्यधाराएँ प्रवाहित थी – भक्ति, रीति और स्वच्छंद वृत्ति की। भक्ति धारा की कविता में भक्ति ही साध्य थी कविता उसके लिए साधन मात्र थी। रीति–धारा वालों का साध्य काव्य ही था साधन भी काव्य था। काव्य की साधना में भी साध्य और साधन दोनों पर समयक् दृष्टि रखनी होती हैं रीति धारा के कर्ताओं ने साधन–पक्ष पर जितना अधिक ध्यान दिया उतना अधिक उसके साध्य पक्ष पर नहीं। रीतिकाल की अर्थ ही है काव्य रीति की धारा अर्थात् काव्य साधन की धारा। काव्य का साध्य उसका अंतरंग पक्ष होता है और साधन उसका बहिरंग पक्ष। इस प्रकार जितना अधिक ध्यान काव्य के बहिरंग पक्ष पर रखते थे उतना अधिक उसके अंतरंग पर नहीं। काव्य का बहिरंग पक्ष अनेक नियमों के आधार पर चलता है। रचनाकार को अपना सारा ज्ञान कौशल उसमें लगाना पड़ता है। किसी में यदि काव्य शक्ति शून्य भी हो तो वह निपुणता और अभ्यास के बल पर कविराज बन सकता है।

यद्यपि स्वच्छंद धारा का साध्य और साधन दोनों ही काव्य था, पर इन कवियों ने साधन की अपेक्षा साध्य पर अधिक ध्यान दिया। स्वच्छंद काव्यधारा में अनुभूति प्रमुख है – वह रानी पटरानी है और बुद्धि उसकी दासी है –

रीति सुजान रानी पटरानी बनी

बुद्धि बावरी है, कवि की दासी।

स्वच्छंद प्रवृत्ति वालों की संवेदना अनेक प्रकार की हो सकती है पर मध्ययुगीन इन स्वछंद कवियों की संवेदना केवल प्रेम को संवेदना थी। वे प्रेम के पीर के पक्षधर थे। घनानंद के काव्य का मूल प्रेम है। उनका प्रेम वर्णन रीतिकाल के अन्य कवियों से इस दृष्टि से भिन्न है कि वह उनके अपने प्रेम संबंधी दुख और दर्द भरे अनुभव से उत्पन्न है उसमें भुक्त भोगी की वेदना है। वे मुगल सम्राट रंगोले के दरबार की सुजान नामक वेश्या से प्यार करते थे। यही आकर्षण नाना भाव से उनके छंदो में फूट पड़ा है। उसके रूप पर सौंदर्य भरे एक–एक अवयव पर कवि की दृष्टि गई है कवन ने अंग–प्रत्यंग का विस्तृत वर्णन न कर उस प्रभाव का वर्णन विशेष से किया है जो उनके मन पर पड़ा है। घनानंद सबसे अधिक साहित्य श्रुत थे इसलिए स्वच्छंद धारा के प्रमुख कवियों रसखानि, आलम ठाकुर, बोधा और द्विजदेव से श्रेष्ठ थे। घनानंद के काव्य में इन सभी की विशेषताएँ समाविष्ट हो गई है। घनानंद में प्रेम संवेदना और भक्ति संवेदना – दोनों की अभिव्यक्ति हुई है। अन्य कवियों से इनकी कविता की विशेषताएँ श्रेष्ठतर है। उन्होंने स्वयं कहा है –

'लोग है लागि कवित्त बनावत

मोहि तो मेरे कवित्त बनावत।'

घनानंद की कविता अभिधा में कम लम्बा व्यंतना में अधिक व्यक्त हुई है। घनानंद ने निम्नलिखित सवैये में अपनी कृति के भाव का रूप इस प्रकार व्यक्त किया है –

उर भौन में मौन का घूंघट कै दूरि बैठि बिराजति बात बनी,

मृदु मंजु पदारथ भूषण सौ सु लखै हुलसै रस–रूप मनी।।

रसना–अली कान गली मधि हैं पघरावति लै चित–सेज बनी,

घन–आनंद बूझनि अंक बसै बिलसै रिझबार सुजान धनी।।

घनानंद की कविता हृदय के भवन में मौन का घूंघट डाल अपने को छिपाये बैठी है। रही संसार की बात। समस्त शास्त्रीय संभार इसमें है। पदार्थ है, पर कोमल चुने हुए मंजुल। उसमें पद अर्थात् शब्द ही नहीं अर्थ भि है, वाच्य, लक्ष्य और व्यंग्य के एक से एक मृदु, एक से एक मंजु। इसमें अलंकार भी है, गहने भी हैं, पर वे सब दीप्त और रत्नजड़ित है। घनानंद की रचना का सौंदर्य ढंका हुआ है, आवृत्त है, वह शब्दों द्वारा वाच्य नहीं है। सहृदय ही उसके मर्म को समझ सकता है।

समुझै कविता घनानंद की

हिय आँखिन नेह की पीर तकी।

घनानंद की प्रेमसाधना चरम साधना के रूप में प्रतिष्ठित है। विरह में प्रेम का पूरा परिवाक हो जाता है। घनानंद के प्रेम में संयोग में भी वियोग का अनुभव होता है–

'यह कैसो संयोग न बूझि परै,

कि वियोग न क्यों हू बिछाहत है।

संयोग में भी वियोग का अनुभव। भक्ति संप्रदाय मं प्रिय के क्षन भर के लिए कुंज में छिप जाने पर गोपिकाएँ अत्यंत व्याकुल दिखाई गई हैं, वह इसी प्रेम साधना के कारण। घनानंद इसी विरह साधना की गाथा अपनी रचनाओं में गाते रहें हैं।

घनानंद की विरह साधना ओर काव्य साधना में समरसता है– ''विरही विचारन की मौन में पुकार है।''–यहीं तक उसकी वाणी नहीं है, वह स्वयं मौन की पुकार में लीन है। इसी प्रकार विरही विषय प्रेम की साधना में विषम परिस्थितियों का सामना करता है तो कवि भी विषम प्रेम की अभिव्यक्ति में विषम शब्द साधना करता है। घनानंद की रचना की यह

वैष्ज्ञम्यम्लकता या विरोध वृत्ति के लिए घनानंद ने लक्षणा का सहारा लिया है। लक्षणा का जैसा चमत्कार इन्होंने दिखाया है हिंदी साहित्य के किसी कवि में इतने लाक्षणिक वैशिष्ट्य नहीं है। यहाँ तक कि आधुनिक काल के जिन छायावादी कवियों में इस विलक्षणता के अत्यधिक उदाहरण मिलते हैं उनमें भी यह विशेषता नहीं है जो घनानंद के प्रयोगों में मिलती है।

घनानंद पर यद्यपि फारसी काव्य और सूफी–साधना का प्रभाव रहा, परंतु अनुभूति उनकी अपनी थी। वे फारसी भाषा में सिद्ध थे, पर मन से वे पूरी तरह से भारतीय एवं ब्रजभाषा में प्रवीण थे। उनकी आत्मा राधा कृष्ण के प्रेम बल को ग्रहण कर पूरी तरह भारतीय रंग में रंग गई। घनानंद ने हिंदी के मुहावरों का प्रयोग करके, जो चमत्कार उत्पन्न कर सहृदय तक पहुँचाया वह दृष्टव्य है –

''रावरे पेट की बूझि परै नहीं रीझि पचाय कै डोलत भूखे।''

घनानंद ने रीतिकालीन ''बिछुरनि मीन की और मिलनि पतंग की'' के प्रेमादर्श का खंडन किया। घनानंद ने मनुष्य की साधना को सर्वोपरि साधना बताया। मीन और पतंग की साधना में नैराश्य की झलक है। घनानंद ने इस नैराश्य को ग्रहण नहीं किया। घनानंद की प्रेम साधना चरम साधना के रूप में प्रतिष्ठित है। उनकी रचना में प्रेम का मार्ग राजपथ की तरह सीधा है। ज्ञान या बुद्धि द्वारा प्रेम के महासागर को पाना कठिन है। प्रेमसागर में प्रेम से विवश होकर एकरस राधा और कृष्ण अवगाहन करते हैं। प्रेम का यह समुद्र उन्हें देखकर उसी प्रकार रसवर्षण करता है, जिस प्रकार चंद्रमा को देखकर सागर में तरंगें उठती है, ज्वार उठता है। घनानंद और सुजान का प्रेम, प्रेम के परम भाव को स्पर्श करता हुआ भक्ति–संप्रदाय की प्रेम साधना के समीप पहुँच जाता है। प्रेम की साधना से पीड़ी भी मधुर हो जाती है। प्रेम की चरम अवस्था संसार के द्वन्द्वभाव को विनष्ट कर देती है। प्रेम की ऐसी परम दृष्टि जिसे हो उसी की दृष्टि, दृष्टि है अन्यथा अन्य आँखे मोर पंख में बनी आँखों की भांति जड़ है –

चाह मीठी पीर जिन्हें उठति आनंद घन,

लेई आँखों और पाखैं कहाँ जानहीं।

घनानंद के काव्य में प्रेमी और प्रिय दोनों ही असाधारण है, इसलिए प्रेमी का विषाद भी असाधरण है। कालिदास के पक्ष की भांति घनानंद का विरही भी उससे दूत बनकर जाने की प्रार्थना करता है। मेरे खारे आँसुओं को मधुर बनाकर अमृत करते बिसासी (विश्वासयाती) सुजान के आँगन में बरसा दो। स्पष्ट है कि विदेशी प्रेरणा होने पर भी घनानंद के काव्य का विकास भारतीय परंपरा के भीतर ही हुआ है, पर सर्वथा नवीन शैली में।